अध्याय – 2

शरद जोशी : जीवनवृत्त, व्यक्तिन्त्व और साहित्य-संपदा

अध्याय – 2

शरद जोशी : जीवनवृत्त, व्यक्तित्त्व और साहित्य-संपदा

भूमिका

शरद जोशी हिंदी के साठोत्तर व्यंग्यकारों में अपना महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वे मूलतः बहुमुखी व्यंग्यकार हैं। उन्होंने अपने जीवन काल में विविध पत्र–पत्रिकाओं में स्तंभ–लेखन का कार्य किया। साथ ही कुछ पत्रिकाओं का संपादन तथा फिल्म लेखन और दूरदर्शन धारावाहिक लेखन का कार्य किया। उनकी ग्रंथ संपदा में "तिलस्म", "जीप पर सवार इल्लियाँ", "रहा किनारे बैठ", "मुद्रिकारहस्य" साहित्य में आरंभ से अंत तक उनकी व्यंग्यधर्मिता सर्वप्रमुख रही है। अपने जीवन काल के उत्तरार्ध में उन्होंने दो बहुमंचित, बहुचर्चित और बहुलोकप्रिय नाटक लिखे। प्रस्तुत अध्याय में उनके जीवनवृत्त, व्यक्तित्व और साहित्य–संपदा पर संक्षिप्त प्रकाश डालना इस अध्याय का मुख्य प्रतिपाद्य है।

जीवनवृत्त

स्वातंत्र्योत्तर हिंदी व्यंग्यकारों में शरद जोशी का अपना विशिष्ट स्थान है। विविध पत्रिकाओं, निबंधों, कहानियों, एकांकियो, फिल्मलेखों, दूरदर्शन धारावाहिकों आदि में उन्होंने अपनी व्यंग्यधर्मिता का जो परिचय दिया है, लाजवाब है। शरद जोशी का जीवन–वृत्त बहुआयामी और रोचक है तथा पाठकों के लिए प्रेरक भी है।

जन्म–माता–पिता आदि

श्री शरद जोशी का जन्म उत्तर प्रदेश के उज्जैन में मुगरमुट्टे की गली में 21 मई 1931 ई. को हुआ। आधी जिंदगी उन्होंने यही बितायी। शरदजी कर्मकांडी ब्राह्मण थे।[1] गुजराती मूलका उनका ब्राह्मण परिवार पुरानपंथी कहा जा सकता है[2]

शरदजी के माता का नाम शारदा (शांति देवी) था।[3] उनमी माँ कहती थी कि उनका बेटा पोस्ट ऑफीस में ही नौकरी करे ताकि वो जीवन पर्यंत ईमानदार बना रहें। उनकी माँ की दृष्टि से पोस्ट ऑफीस ही ऐसा महकमा है जिसमें पोस्टकार्ड और लिफाफे निश्चित कीमत पर ही बेचे जा सकते हैं और बेईमानी की कोई गुंजाइश नहीं रहती थी। शरदजी अपनी माँ पर बहुत बहुत प्यार करते थे। तपोदिक की बीमारी से माँ की मृत्यु हुई थी। जब माँ का स्वर्गवास हो गया तो उन दिनों वह बहुत ज्यादा उदास रहते थे। उनके मित्रों ने शरदजी को उस वक्त सहारा दिया था।[4]

शरद जी के पिता का नाम श्री श्रीनिवास जोशी था।[5] शरदजी के पिता पक्की सरकारी नौकरी पसन्द करनेवाले आदमी थे। पिता भी खुद सरकारी नौकरी में थे। वे पुरानपंथी विचारों के थे। पिताजी को सिर्फ पढाई की किताबें पढ़ना ही अच्छा लगता था।

शरदजी के चार बहनें थीं, एक बड़ी और तीन छोटी। एक छोटा भाई भी था।[6] इन सभी भाई–बहनों में बहुत ही प्यार था। उनका छोटा भाई इंदौर में ही रहता था।

<u>बचपन</u>

श्री शरद जोशी का बचपन उज्जैन में ही बीत गया। शरदजी ने अपनी हाईस्कूल की पढ़ाई उज्जैन में ही पूरी की थी। शरदजी दौलत गंज मिडिल स्कूल में पढ़ते थे।[7] उज्जैन में ही शरदजी के सब खास मित्र थे। उज्जैन में ही शरदजी को पढ़ने की आदत लगी, यहाँ ही उन्होंने लेखन की शुरूआत की। बचपन में ही शरदजी को किताबें पढ़ने का शौक था। उन्होंने बचपन में प्रेमचंद, शरत व देवकीनन्दन खत्री द्वारा लिखित पुस्तकों को घरवालों से छिपकर पढा था। धीरे–धीरे शरदजी की गद्य–लेखन में रूचि बढ़ने लगी। उन्होंने चेखव, यशपाल, गोर्की, मोपासां, बालजक, प्रेमचंद, ओ "हेनरी, कृश्न चन्दर, मंटो, शरत्, रवीद्र, सॉमरसेट, मॉम और तॉल्सतॉय – इन लेखकों को पढ़ था।[8] स्कूल की पढ़ाई के बाद आगे की पढ़ाई के लिए उन्होंने होल्कर कॅालेज इन्दौर में एडमिशन ली।[9] शरदजी के घर का वातावरण बहुत ही कड़क था।

शिक्षा

शरदजी की पढ़ाई कभी उज्जैन, कभी नीमच, कभी देवास, महू में हो गई थी। अंत में होल्कर कॉलेज (इंदौर) से बी.ए. किया था।[10] शरदजी पढ़ाई में भी होशियार थे। हिंदी में हमेशा फर्स्ट आते थे।

नौकरियाँ

शरदजी ने अपनी जींदगी में किती नौकरियाँ बदली हैं, वे खुद जानते हैं। शरदजी को नौकरी करना पहले से ही पसंद नहीं था। वे हमेशा लिखना ही चाहते थे। लिखना ही उन्हें अच्छा लगता था। लिखने के लिए उनहोंने सरकारी नौकरी भी छोड़ी। शरदजी में सरकारी तो क्या, किसी तरह की भी नौकरी करने का माडा नहीं था। फिर भी शरद जोशी ने "नई दुनिया" में "परिक्रमा" के साथ हर दूसरे दिन छपनेवाले कॉलम से नियमित लिखना शुरू किया और उनके आखिरी दिन भी उनका "प्रतिदिन" नवभारत टाइम्स में छपा।[11] "नई दुनिया" से "आकाशवाणी" और वहाँ से मध्य प्रदेश के सूचना विभाग में उन्होंने नौकरी की और बड़ी मुश्किल से की। फिर एक दिन "सँभाल तेरी घोड़ी और बन्दे ने नौकरी छोड़ी" कहकर अलग हो गए। इसके बाद सन अस्सी–इक्यासी में कोई सवा–डेढ़ साल साप्ताहिक "हिंदी एक्सप्रेस" निकालकर संपादकी की।[12]

परिवार/विवाह

शरदजी ने अंतरजातीय विवाह किया था। उन्होंने मुस्लिम लड़की इरफाना सिद्दीकी से शादी की थी। उनका वह प्रेमविवाह ही था। वह उनके साथ ही काम करती थी। वह लेखिका और कुशल अभिनेत्री थी। जब उन्होंने भागकर शादी की थी तब उनके जेब में सिर्फ सत्रह रूपये थे।[13] शरदजी ने जब मुस्लिम लड़की के साथ शादी की थी तब उन दोनों के घरवालों से विरोध था। तब शुरू–शुरू में इरफाना शरजी के घरवालों से अलग मकान में रहती थी और जब शरदजी का बाद में भोपाल में तबादला हुआ, तब शरदजी के यहाँ भोपाल में इरफानाजी गयी। अपनी शादी के बारे में इरफानाजी कहती हैं – "मैं उन दिनों इंदौर में थी और "नई दुनिया" में कहानियाँ लिखती थी, रेडियों में भी देती थी। जोशीजी भी वही थे और

अखवारों रेडियो पर लिख रहे थे। बस, लेखन के जरिए हमारा परिचय हुआ, हम करीब आए, हमको एक–दूसरे के विचार समान लगे और हमने शादी करने का फैसला किया। यह सन 58 की बात है इसी साल हमने शादी की। तब उतना जातिवाद नहीं था, फिर भी हमारी शादी का विरोध तो हुआ ही। घर के लोग पक्ष में नहीं थे। लेकिन हमने हर तरह की स्थिति का सामना करने की ठान रखी थी। शादी हुई, और इस शादी में तब के "नई दुनिया" के सम्पादक राहुल बारपुते, राजेंद्र माथुर, (माथुरजी ने तो कन्यादान किया था) आदि रेडियो अखबार और नाटक से जुड़े लोग शामिल हुए। बाद में माहौल शान्त हो गया। शान्त होना ही था, क्योंकि यह शादी विचारों पर आधारित थी। इसके अलावा हम दोनों के परिवार पढ़े – लिखे परिवार थे, लिहाजा समय के साथ सब ठीक हो गया । शुरू में जब विरोध था, तो जोशी जी ने मुझे अलग मकान में रखा था, बाद में उनका तबादला भोपाल हो गया, तो हम लोग भोपाल आ गए।"[14]

शरदजी और इरफाना में शुरू से ही परिपक्व समझदारी थी और एक दूसरे को सौंपा पूरा विश्वास था। इसके बारे में शरदजी की बीबी इरफाना कहती हैं कि – "हम दोनों अपने मन चाहे काम कर रहे थे.. जोशी जी निरन्तर लिख रहे थे ... उनकी सबसे बड़ी जरूरत यही थी और मैं घर बच्चों के साथ नौकरी.. बचे हुये समय में अपना पुराना नाटकों का शौक .. जैसी जिंदगी हमने चाही थी जी रहे थे, जो करना था, कर रहे थे। वह सब न मिलता तो शायद अफसोस होता।"[15] भोपाल में एक स्कूल में इरफाना ने अध्यापिका की नौकरी की। उसकी नौकरी के बाद शरदजी ने अपनी नौकरी छोड़ दी। क्योंकि शरदजी ने इरफाना से पहले ही कह दिया था कि मैं नौकरी नहीं करूंगा, "फ्रीलांसिग" करूंगा। इरफाना जानती थी कि शरदजी पहले से ही स्वतंत्र लेखन से जीवन चलाना चाहते हैं, क्योंकि शरदजी को लिखने का शौक जुनून की हद तक था।[16]

इरफाना और शरदजी के परिवार में एक असीम समझौता हुआ था। इस समझौते पर ही उन दोनों की शादी सफल हो गयी थी। बाद में शरदजी भोपाल से बम्बई आ गये। कुछ साल अकेले ही रहें, बाद में सारा परिवार बम्बई में इकठ्ठा होकर रहने लगा। शरदजी और इरफाना को तीन सुंदर लडकियाँ हुई। बानी, ऋचा, नेहा। तीनों ही लडकियाँ नाटक में काम करती थीं।

लेकिन नेहा को ज्यादा सफलता मिली थी। यह सारा परिवार मध्यवर्गीय होकर भी सुखी परिवार था। शरदजी हमेशा अपने परिवार के प्रति समर्पित और बड़े टची थे। नागपुर में जब शरदजी कुछ काम के लिए गये थे तब अपने दोस्त से बोले – "ऋचा आजकल कामकाजी हो गई है। एक ऐसा बैग खरीदना है, जिसमें वह दिन–भर की तैयारियाँ भरकर निकल सके। पर छोटा हो, सुन्दर हो।"... बम्बई में टाइम नहीं मिलता। अभी यहाँ फुरसत है।"[17] ऐसे ही एक दिन लखनऊ के होटल में एक बार बड़ी देर तकर अपने सामान में एक कागज खोजते रहें, और अपने मित्र से बोले – "नेहा ने अपने पाँव का नाप खींचकर दिया था। उसके लिए चप्पलें लेना है।"[18] हैदराबाद में गोष्ठी के तुरन्तबाद, वानी के लिए हैदराबादी मोतियों की खरीदी का कार्यक्रम था। गर्मियों में इन्दौर आते, तो कहते, दो–चार किला सागें (हवाओं द्वारा गिराए गए पके आम) ले जाना चाहता हूँ, बम्बई में नहीं मिलतीं।[19] शरदजी ने बानी और ऋचा की शादी बड़ी धूम–धाम से की। अपने दोनों दामादों को वे खुश चाहते थे। उनकी रूचि–अरूचि के बारे में शरदजी प्रायः जिक्र करते थे।[20] शरदजी को जामुन बहुत पसंद थे तो नेहा और ऋचा गोरेगांव में लोकल से जाते और वहाँ से अच्छी क्वालिटी के जामुन लाकर अपने पिताजी को देते थे।[21] इसी तरह शरजी का पारिवारिक जीवन अच्छा ही था।

<u>मित्रपरिवार</u>

शरदजी का मित्रपरिवार काफी बड़ा था। उनके विनोदी स्वभाव ने ही उनके मित्र ज्यादा बनाये थे और दुश्मन कम। अपने एक मित्र नरेन्द्र कोहली को शरदजी ने पत्र लिखा था। उस पत्र में भी वे इतनी छोटी–छोटी बातों में भी अच्छे व्यंग्य करते थे कि जिसे पढ़कर हँसी आती। एक्सप्रेस के सम्पादन के दिनों में ही शरदजी ने नरेन्द कोहली के नाम अपना एकमात्र पत्र लिखा था। सम्पादक की ओर से एक रचना भेजने का आदेश नरेन्द्र जी को दिया था। नरेन्द्र जी ने एक आत्मकथात्मक निबन्ध लिखा था। वही उठाकर भेज दिया। रचना लौट आई और साथ ही पत्र आया –

8.5.1980

प्रिय नरेन्द्र,

फौरन रचना भेजने के लिए फौरन धन्यवाद। इसे फौरन वापस कर रहा हूँ, क्योंकि

मुझे डर है कि इस फौरन छापा, तो मेरा साप्ताहिक फौरन बन्द हो जाएगा। भैया, चार दिन देर से भेजना, अपुन को चलेगा। मगर शुरू के अंकों में तुम्हारी आत्मकथा का टेबल कुर्सी प्रसंग छाप मैं अपने पाठकों को कैसे सन्तुष्ट करूंगा। वे भी तुमसे अपेक्षा करते हैं.. मैं भी।

बहुत–बहुत प्यार और जोरदार रचना का इन्तजार।[22]

तुम्हारा,

शरद जोशी

इसी तरह कुछ शब्दों में, वाक्यों में शरदजी की व्यंग्यात्मकता दिखाई देती है। नरेंद्र कोहली के अतिरिक्त उनके मित्र परिवार राहुल बारपुते, राजेंद्र माथुर, अवधेश व्यास, धर्मवीर भारती, प्रभाष जोशी, श्रीलाल शुक्ल, शशि मिश्र, लतीफ घोंघी, राजेंद्र सिंन्हा, रवींद्रनाथ त्यागी थे।

<u>संघर्षपूर्ण जीवन</u>

शरद जोशी का जोवन अंतिम क्षणतक संघर्षपूर्ण ही रहा। वे मध्य वर्गीय ही थे। जब शरदजी ने भोपाल छोड़कर यानी सरकारी नौकरी छोडकर वे बम्बई आ गये तब वे बांद्रा स्टेशन (पश्चिम) के मान सरोवर नामक लॉज में एक कमरा लेकर रहते थे। चाय, नाश्ता, खाना सब बाजार से लाते थे। वहाँ उनका एक ही कमरा था। वही उनका शयनकक्ष था, वही उनकी लाइब्रेरी थी, वही उनके दोस्तों का उपद्रव कक्ष था, वही उनका लेखन स्थल।[23]

शरदजी अकेले ही बम्बई में आये थे तब तक उनका परिवार भोपाल में ही रहता था। उस दिनों शरदजी के मित्रों ने शरदजी के स्वभाव को बहुत ही नजदीक से देखा। उनका संघर्षशील व्यक्तितत्व, कष्टों को सहने की क्षमता, उनकी स्वाभिमानी चेतना, उनकी मिलन सरिता और जिससे भी इस संघर्ष के दौरान मिले उसके प्रति उनकी कृतज्ञता, निष्ठा, अवांछित व्यक्तियों और स्थितियों के प्रति उनका क्रोध भी देखा और अपने सीधे–सादे स्वभाव के कारण कभी–कभी गलत लोगों के बहकावे में आते भी देखा था।[24]

शरदजी इण्डियन एक्सप्रेस के साप्ताहिक प्रकाशन हिन्दी एक्सप्रेस में भी सम्पादक बनकर गए पर कंपनी की कुछ आन्तरिक स्थितियों के कारण वह बन्द हो गया ।[25]

शरदजी की आर्थिक विपन्नता सामान्य व्यक्ति के दैनिक अर्थ–संकट से भिन्न किस्म की थी। हिसाबी–किताबी दुनिया में रहते हुए भी हिसाब से उनका दूर–दूर का कोई नाता नहीं था। बाद को उनके हितैषी, व्यवहार कुशल मित्रों ने उनके आर्थिक शोषण की प्रतीति करवायी। लेकिन हाथ में आई हुई रकम को बचाकर रखने की शिक्षा शायद ही उन्हें कभी मिली हो। हजारों–हजार रूपये सुबह उनकी जेब में आ जाते तो शाम तक न जाने वे रूपये कहाँ से कहाँ पहुँच जाते थे।[26]

पैसे जो भी घर में आते, एक जगह रख दिए जाते। जिसे जो जरूरत होती, निकाल लिया करता। कभी किसी ने पैसों की बहुत फिक्र नहीं की। कभी लेखन को, जीवन को, पैसों के साथ जोड़कर नहीं देखा।[27]

शरदजी को मंचों के आमन्त्रण तो मिलते ही थे, दूरदर्शन और फिल्म लेखन में भी काम मिल रहा था। सबसे सुकून और आराम के दिन थे। लेकिन बरसों अकेले रहकर संघर्ष करते रातविरात होटलों का खाना खाते, यात्राएँ निरन्तर करते रहने का समवेत प्रभाव उनके शरीर पर पड़ने लगा। 1980 में उन्हें डाइबिटीज भी था। अथक मेहनत कर उन्होंने आखिरकार एक फ्लैट अपनी पसन्द का बनवा ही दिया। उसके कुछ ही समय बाद उनका स्वास्थ्य कुछ और बिगड़ा। अस्पताल गए, पर फिर ठीक होकर आ गए। लेकिन अकस्मात सबको खबर मिली की अब शरद जी इस दुनिया में नहीं रहें ।[28]

<u>व्यक्तित्व</u>

शरद जोशी का बाह्य और आंतरिक व्यक्तित्व बड़ा ही लुभावनेवाला था। उनका व्यक्तित्व उनके जीवन में जो चढ़ाव–उतार आए उनके अनुरूप ही, अंत तक रहा।

<u>वेश–भूषा</u>

श्री शरद जोशी की वेश–भूषा अत्यन्त सादी थी। चेहरा देखिए तो बहुत भोला–सा लेकिन आँखें भी कभी–कभी चमकें तो उनमें शरारत की झलक कौंध जाती थी। बातें भी सीधी, भोलीं–भालीं। बोलने के अन्दाज में एक इन्दौरी लहजा।[29] कपडे सादे, मोटे फ्रेम का चश्मा और चाल में एक जेती जैसी कहीं पहुँचने की जल्दी हो। रहन–सहजन और मन की यह सादगी

शरद जोशी ने जब भी बनाए रखी जब वे अपने व्यंग्यों के माध्यम से ख्याति को शिखर पर पहुँच गए।

स्वभाव

शरद जोशी में विनोद बुध्दि जन्मजात ही थी। वे सरल व्यक्ति थे, विनोदप्रिय भी बहुत थे। हमेशा खुद भी हँसते और दूसरों को भी हँसाते।[30] जोशी जी स्वभाव से बेहद हँसमुख और खुशमिजाज थे। वे छोटी-छोटी बातों में भी हास्य निकाल लेते थे। वे हमेशा खुश रहते थे। जब कभी समस्या आती थी तब थोड़ी देर बैठकर सोचते फिर नया रास्ता ढूँढ निकालते ओर फिर हँसने लगते। उन्हें गुस्सा भी आता था और खूब जोर से आता था। लेकिन बहुत जल्दी ही गायब हो जाता था। उनका स्वभाव ही लोगों को सहयोग देने का था।[31] शरद जी स्वभाव से बहुत ही शालीन थे। शरद जी हाजिरजवाबी भी थे। "हर सफल आदमी के पीछे एक औरत होती है" कहावत को आगे बढ़ाते हुए वे कहते, "और उस औरत के पीछे उस आदमी की पत्नी होती है।"[32] शरद जी में बर्दाश्त करने की शक्ति उस सीमा तक थी, जब तक कि वह सही है। शरद जी चोट पहुँचानेवाले व्यंग्य को बर्दाश्त नहीं करते थे।[33] शरद जी के बारे में किसी प्रकार का निर्णय लेना बहुत कठिन था। वे बहुत मुड़ी स्वभाव के थे। शरद जी का व्यक्तित्व, अपनी शर्तों पर अपना जीवन जीने वाले का व्यक्तित्व था। कहीं समझौता नहीं, दूर तक समझौता नहीं। टूट जाएँगे, पर झुकेंगे नहीं। मध्यवर्गीय ब्राह्मण होकर भी ठेठ राजपूती ठसक। भारत भवन में, इरफाना का टिकट खरीदकर भी नाटक देखना उन्हें पसन्द नहीं था।[34]

शरद जी के बारे में किसी प्रकार का निर्णय लेना बहुत ही कठिन था। शरद जी के बारे में कौनसा भी निर्णय उनके निकटतम मित्र भी नहीं ले पाते थे, वे निर्णय लेलें और शरदजी असहमत हो जाएँ तो? एक किस्सा है - "ऋचा की बारात सुबह 6 बजे लगी थी, पार्टी भी सुबह होनी थी। सुबह सुबह पूर्व राष्ट्रपति ज्ञानी जैलसिंह जी का फोन "नवभारत टाइम्स" में आया कि वे विवाह में आना-चाहते हैं, पर विवाह का स्थान उन्हें नहीं मालूम है, कोई मार्गदर्शन करे। नवभारत से फोन राजेंद्र माथुर के यहाँ पहुँचा। माथुर जी बोले, रास्ता बताने के लिए

तो मैं किसी को भेज दूँगा, प्र पहले शरदजी से पूछ लिया जाए, कि वे जैलसिंह जी का आना पसन्द करेंगे या नहीं करेंगे । पूछा गया । बोलो आना चाहते हैं तो जरूर आएँ, मैंने निमंत्रण भेजा था । श्री.जैलसिंह जी आए और उनके आने के पहले काफी सारे सुरक्षाकर्मियों ने, स्थान को लेकर तरह तरह की तहकीकात की । मतलब यह कि श्री जैलसिंह जी आना चाहते हैं तो क्या किया जाए ? उन्हें रास्ता बतानेवाला जाए या नहीं ? यह निर्णय भी, उनके अभिन्नत मित्र श्री राजेन्द्र माथुर ने स्वयं नहीं लिया।[35] शरदजी का व्यक्तित्व गरिमामय और साहित्यधर्मी था। शरदजी व्यवहारशालीन थे। "निंदक नियरे राखिए, आँगन कुटी छवाय" पंक्ति पढ़ते समय, बड़ी आदर्श मालूम होती हे, पर हकीकत में खरी बात कहनेवाले को सहने का संयम, कहीं दिखाई नहीं देता । शरद जी खरी–खरी कहनेवाले खरे व्यक्ति थे।[36]

शरद जोशी बहुत ही निश्चयी थे । एक बार उन्होंने निश्चय किया तो आखरी अंत तक वही निश्चय पर अटे रहते थे । शरद जी ने निश्चय किया तो वे निश्चिंत हो जाते थे । यह उनकी जबरदस्त विशेषता थी । शरद जी बहुज ज्यादा उधेड़ नहीं पालते थे । निर्णय लेते थे और निश्चिंत हो जाते थे ।[37] शरद जी बड़े विचित्र किस्म केदृढ़ निश्चयी व्यक्ति थे । उन्होंने युवावस्था में उन्हें मुसलमान लडकी से प्यार हो गया तब उन्होंने निश्चय किया की शादी करेंगे तो उस लड़की से ही करेंगे । साथ रहना है तो साथ ही रहेंगे । उन्होंने निश्चय कर लिया कि सरकारी नौकरी छोड़नी है क्योंकि नौकरी के साथ अपने ढंग का लिखना नहीं हो पाएगा, तो नौकरी छोड़ दी । जब शरद जी ने निश्चय किया कि सरकारी नौकरी छोड़नी है तो सीधे पहुँच गये पत्नी के स्कूल में । वह पढ़ा रही थी । बाहर बुलवाया सिर्फ यह कहने के लिए कि अब चलता बिल्कुल नहीं दीखता । रेजिगनेशन दे दूँ ? और उतना ही "कूल" उत्तर मिला – "दे दो ।"[38] शरदजो की पत्नी इरफाना जी कहती थीं कि, "शरद जी का "चार्म" सिर्फ लेखन ही था । बहुत ज्यादा ऐषोआराम का सपना हम दोनों में किसी ने नहीं देखा था। सपना सिर्फ एक – अपने ढ़ंग से लिखना है और जीवनभर लेखक ही बने रहना है, लेखक बनकर ही जीना है।[39] ऐसे उनके विचार थे । इरफाना से अपने विवाह को शरदजी ने ऐसा महत्त्व कभी नहीं दिया, जैसा कि अन्तर्जातीय विवाह करनेवाले देते हैं, और दिया जाना पसन्द

करते हैं । शरद जी कहते थे, कि मैंने राष्ट्रीय एकता को मद्देनजर रखकर इरफाना सिद्दीकी से शादी का निर्णय नहीं लिया था । वही किया था, जो एक सामान्य युवक, उस अवस्था में करता । उनकी प्रेमिका चाहे उस समय सिन्धी होती, क्रिश्चिन होती या उनकी अपनी जाति की होती, वे वही करते, जो उन्होंने किया । पर कुलमिलाकर जाति से उनको विद्रोह तो था ही।[40] शरद जी लोगों से बहुत जल्दी नाराज हो जाते थे और उतनी ही जल्दी भूल भी जाते थे नाराजगी । शरद जी किसी शहर से नाराज होते थे तो पूरे शहर से ही नाराज हो जाते थे । किसी कवि सम्मेलन में जैसे उन्हें नहीं सुना या ढ़ंग से उन्हें प्रेजेन्ट नहीं किया – जैसे जयपुर में एक लाख, डेढ़ लाख श्रोताओं में से लोग बीच में चले गये तो बोले अब मैं जयपुर जाऊँगा ही नहीं ।[41] शरद जी बड़े साधारण लगनेवाले असाधारण व्यक्ति थे । वे जितने नम्र थे, भीतर से उतने ही स्वाभिमानी थे । बाहर से लापरवाह दीखने वाला यह व्यक्ति नियमित दिनचर्या का यथासम्भव पालन करता था, पढ़ता था, नये लेखकों को प्रोत्साहन देता था और कभी भी किसी की निन्दा या अनुचित आलोचना नहीं करता था । उनकी निःसंगता इन बातों से प्रकट होती है कि जब उन्होंने एक मुस्लिम अभिनेत्री से विवाह किया तो उनकी जेब में सिर्फ सत्रह रूपये थे और जब उन्होंने सरकारी नौकरी को लात मारी तब वह तीन मासूम बेटियों के बाप थे। थे।[42]

शरद जोशी बहुमुखी प्रतिभा वाले कलाकार थे, साहित्यकारों में अग्रणी अच्छे कलाकार से बढ़कर वे एक अच्छे मानव थे ।

रहन–सहन

शरद जोशी का रहन–सहन हमेशा सादा रहा। खाना–पीना एकदम सादा था। वे रोज सबेरे छह बजे उठ जाते थे। आठ नौ बजे तक सारे अखबार पढ डालते। नौ से दस के बीच अमूमन वे एक रचना पूरी कर डालते थे। दोहपर के खाने के बाद सीरियल लिखते थे। शाम को टाइपिस्ट को डिक्टेशन वगैरह देते। उनकी एक खास आदत थी। जब तक उनका लिखना पूरा नहीं होता था, खाना नहीं खाते थे। उन्होंने सिगरेट, तम्बाकू या शराब को कभी छुआ तक नहीं, जबकि उनका सारा सर्किल इस तरह का था कि वहाँ ये चीजें अपरिहार्य थीं। वे जीवनभर स्वस्थ रहे।[43]

शौक / रूचि

शरद जी का शौक किताबें पढ़ना, लिखने के साथ–साथ घूमना, बातचीत करना, पैसे खर्च करना था और लिखना, लिखना और सिर्फ लिखना ही था। शरद जी को बचपन से ही लिखने का शौक था । इंदौर में ही पढ़ने का और लिखने का शौक शरद जी को लगा था। उन्होंने दोस्तों के साथ हस्तलिखित, पत्रिकाएँ भी निकालीं और लेखन भी किया। "सितारे" नामक एक बच्चों का कविता–संग्रह भी प्रकाशित किया था।[44] व्यावसायिक काम खूब किये, पर अपनी शर्तों पर किये। शरद जी ने साठ साल की उम्र तम पचासों मकान बदले। अंत में अपनी पसंद का प्लैट बम्बई में ले ही लिया। नाटक देखने का भी उनको शौक था और लिखने का तो था ही।[45]

साहित्यसाधना

शरद जी को लिखना अत्यंत प्रिय था। उन्होंने एक साथ कई कई जगह लेख लिखे थे। कॉलम लिखा, सीरियल लिखे , फिल्मों में संवाद लिखे। घर में होते तो घर में लिखते, बाहर होते तो बाहर लिखते। जब नहीं लिखते, तब भी उनके दिमाग में लिखने के विषयों को लेकर खिचड़ी पकती रहती। फ्रीलांस लेखन बनने का विचार शरद जी के मन में तब आया जब उन्होंने चेखर, गोर्की, मोपासाँ, बालजक, प्रेमचन्द, ओ "हेनरी", यशपाल, कृश्न चन्दर, मंटो,शरत और सॉमर सेट मॉम को पढ़ा। तब शरद जी की आर्थिक परिस्थिति ठीक नहीं थी, शरद जी ने सोचा, क्यों नहीं, मैं भी, लिखकर ही जिऊँ ?[46] लिखना उनके लिए व्यसन जैसी प्रिय व्यस्तता थी। "लिखने के लिए मुझे कुछ नहीं चाहिए। थोड़ी–सी धूप, ठण्डी हवा, बढिया कागज, और एक ऐसी कलम, जो बीच में न रूके। एकाध चाय। मैं आपको सुन्दर रचना देने का वादा करता हूँ।"[47]

वैसे तो शरद जी ने बाल्यकाल से लेखन आरंभ किया था। उन्होंने दोस्तों के साथ हस्तलिखित पत्रिका निकाली। उन्होंने 1953 में "नई दुनिया" (इन्दौर), में "परिक्रमा" नामक स्तम्भ लिखना आरम्भ किया था। साथ ही उन्होंने "ज्ञानोदय", "रानी", "माधुरी" आदि विभिन्न पत्रिकाओं में कहानियाँ एवं व्यंग्य लेखन लिखे। 1955 में शरदजी ने आकाशवाणी इन्दौर में

पांडुलिपि लेखक के रूप में कार्य किया था।। 1960 में शरद जी ने "धर्मयुग", में "बैठे–ठाले" स्तंभ में लिखना शुरू किया था। "नई –दुनिया" इन्दौर में "और शरद जोशी", "रविवार" में 9 नाम के तीर" नामक कॉलम लिखे।[48] 1985 में शरदजी "नवभारत टाइम्स" में "प्रतिदिन" स्तम्भ लेखन शुरू किया था। देश भर की सभी महत्त्वपूर्ण पत्रिकाओं "सारिका", "धर्मयुग", "साप्ताहिक हिंदुस्तान" , "रविवार" आदि में व्यंग्य लेख लिखे। शरद जी ने जीवन के अन्तिम क्षणों तक स्वतन्त्र लेखन किया।[49]

शरद जोशी ने "नई – दुनिया" (1953) में "परिक्रमा" के साथ हर दूसरे दिन छपनेवाले कॉलम से नियमित लिखना शुरू किया और उनके आखिरी दिन भी उनका "प्रतिदिन" "नवभारत टाइम्स" में छपा।[50] रोज लिखना उनके लिए रोजी कमाना या लिखते रहने का शगल नहीं था। लिखना उनके लिए अपनी तरह जीने की अनिवार्य शर्त था। वे व्यंग्य में अभिव्यक्त होकर ही जी सकते थे। इसलिए उनका लिखना साँस लेने की तरह सहज, स्वाभाविक और निष्प्रयास था। रोज लिखकर जैसे वे अपने होने और बने रहने के अधिकार को पुनर्प्राप्त करते थे। शरद जोशी लिखने की सधुक्कड़ी पर जीते थे।[61] शरद जी लेखन की व्यसनता से ही आज अमर हो गये हैं।

जब तक हिंदी साहित्य में व्यंग्य लेखन चलता रहेगा, तब तक शरद जी अमर रहेंगे।

शरदजी हमेशा लिखते ही रहते थे। वे रात–दिन किसी भी समय लिखना चाहते थे। वे समय फिजूल नहीं करना चाहते थे। वे अपना सारा समय लेखन में ही गवाना चाहते थे। लिखना उनके लिए एक बंधन–सा बन गया था। उन्हें जैसे लिखने की आदत ही बन गयी थी। शरद जी बम्बई में अपना स्थान कायम करके रहे थे। तो कुछ लोग कहते थे कि – "ये बम्बई, कविता की नाहीं, गद्य की नगरी है।"[52] शरद जी ने धीरे–धीरे बम्बई को ही नहीं सारे देश को अपने गद्यपाठ से या लेखन से मंत्रमुग्ध कर दिया था।

शरदजी बाद में फिल्मी लेखन से ऊब गये थे। वह कुछ हटकर लिखना चाहते थे। पर विवशता यह थी कि किसी को मना कर नहीं पाते थे, बम्बई में लोग परेशान करते थे।[53]

शरदजी सुबह से लेकर शाम तक लिखा करते थे। लोग जीने के लिए लिखते हैं, वे लिखने के लिए जीते थे। और मरते दम तक शरदजी ने लिखना नहीं छोडा। अपने रचना को विषय बना दिया। "परिक्रमा" से लेकर "यथासम्भव" तक की और उनके मरणोपरात्न छपे संग्रह "मुद्रिका रहस्य" की क्रम–सूची पढ़ते ही यह स्पष्ट हो जायेगा कि लेखन की पैनी निगाह सिर्फ प्रकाशित वस्तुओं पर ही नहीं पड़ती, उन अन्तरों कोनों में भी आती है जहाँ के धुँधलके में विसंगत जिन्दगी घिसट रही है।[54]

शरदजी ने वाचन, लेखन को आत्मसात किया था। रोज लिखना उनके लिए रोजी कमाना या लिखते रहने का शगल नहीं था। लिखना उनके लिए अपनी तरह जीने की अनिवार्य शर्त था।[55] जब शरदजी को मंचपर रचना पढ़नी होती थी तब रचना पढ़ने के लिए वह पहले बहुत तैयारी करते थे। इसके बारे में उन्के घनिष्ठ मित्र प्रेम जनमेजय कहते हैं – "माध्यम वालों ने संगोष्ठी का आयोजन किया था। रात को हास्य–व्यंग्य कवि सम्मेलन था और अगले दिन बातचीत। उस दिन मैंने देखा कि शरद जोशी अब भी उतनी तैयारी के साथ मंच पर जाते हैं जितनी तैयारी के साथ कोई नया मंचित भी नहीं जाता होगा।[56] वह अपने जरा खराब गले के कारण चिंतित थे, और पढ़ने के बाद जब आए तो बैठते ही पूछा – "जमा क्या?" मैंने कहा – "बढ़िया" तो बोले – "नहीं, जमा नहीं पाया। एक तो गला खराब था और दूसरे, पढ़ते हुए मुझसे एक पैरा छूट गया था।" बहुत ज्यादा कॅांशेस थे वे।[57]

<u>व्यंग्यधर्मिता</u>

शरदजी में विनोब बुद्धि जन्मजात ही थी, इसका और एक उदाहरण पद्मश्री मिलने के बाद, दूसरे–तीसरे ही दिन शरदजी का शाजापुर में सम्मान हुआ। शाजापुर से ही बरसों पहलें, वे इरफाना को लेकर भागे थे। सम्मान के समय माइक पर स्वागत में बारम्बार कहा गया–

"शाजापुर के दामाद हमारे नगर के दामाद, बगैरह। शॅाल, फूल, मालाएँ, नारियल की भेटें मिलीं। उत्तर देते हुए वे बोले – "लड़की भगाने के कारण, जो रस्में उस समय छूट गयी थीं, आज आपने पूरी कर दी हैं।"[58] अपने संघर्षपूर्ण ईमानदार लेखन को, सन्देह से देखा जाना शरदजी को बिल्कुल पसंद नहीं था।।

मंच पर गद्य की परम्परा, मराठी में तो वर्षों से चली आ रही है, पर हिंदी में इसकी शुरूआत शरद जोशी से हुई। एक कार्यक्रम में शरदजी को अतिथि रूप में बुलाया गया था। वहाँ उन्होंने एक निबन्ध "अध्यक्ष महोदय" सुनाया / पढाया। इसकी कुछ पंक्तियाँ – "हर शहर में कुछ अध्यक्ष किस्म के लोग पाए जाते हैं। यह शहर के साइज पर निर्भर करता है, कि वहाँ कितने अध्यक्ष हों – प्राय: अध्यक्ष गम्भीर किस्म का प्राणी होता है या उसमें यह भ्रम बनाए रखने की शक्ति होती है, कि वह गम्भीर है। जिस शाम उसे अध्यक्षता करनी होती है, वह तीन–साढ़े तीन बजे से गम्भीर हो जाता है .... अध्यक्षता एक मर्ज है। लग गया यानी हमेशा के लिए। असली पेशेवर अध्यक्ष किसी सभा में तभी जाते हैं, जब वे वहाँ अध्यक्ष हों। वे भीड़ में नहीं बैठ सकते। वे जब निमंत्रित किए जाते हैं, यह मानकर चलते हैं, कि वे अध्यक्ष होंगे.. अध्यक्ष बनने वाले कई तरह से अध्यक्ष बनते हैं। कुछ चौंककर अध्यक्ष बनते हैं, कुछ सहज अध्यक्ष बन जाते हैं, जैसे शहीद होने जा रहे हों। कुछ हेडमास्टर की अदा से अध्यक्ष बनते हैं और कुछ ऐसे सिर झुकाए बैठे रहते हैं, जैसे मंडप में लडकी का बाप बैठता है। अध्यक्षता करता अध्यक्ष प्राय: हर पाँचवें मिनट पर मुस्कराता है। ऐसा वह तब करता है, जब इसकी कोई वजह नहीं होती। हर ढाई मिनिट पर वह वक्ता की तरफ देखता है, हर एक मिनट बाद, सामने की पंक्ति में बैठे लोगों को और हर दो मिनट बाद महिलाओं को।"[59]

किसके सामने नहीं झुका। जब शरदजी युवावस्था में ये तब वे "नई –दुनिया" के प्रधान सम्पादक श्री राहुल बारपुते के पास पहुँचे । वहाँ उनकी एक – दो कहानियाँ छप चुकी थीं। वे नियमित कॅालम लिखना चाहते थे। तब प्रधान सम्पादक का प्रश्न था –

"हम आपको क्यों छापे ? जितनी जगह में आपको छापेंगे, उतनी जगह में विज्ञापन क्यों नहीं छापे ?"[60]

उसी वक्त शरदजी ने उत्तर दिया –

"आप अपने ये सम्पादकीय क्यों छापते हैं ? इनकी जगह विज्ञापन क्यों नहीं छापते?"

आज से करीब चालीस साल पहले का यह उत्तर तब भी प्रधान सम्पादक के लिए असामान्य था। राहुलजी ने कहा – "ठीक है, नमूने के बतौर, कॅालम के चार लेख लिख दीजिए।"

शरदजी ने फटाफट चार लेख, एक ही दिन में लिख दिए। कॉलम शुरू। शीर्षक "परिक्रमा"। सप्ताह में तीन दिन "परिक्रमा"। और यहाँ से नियमित लेखन की परिक्रमा शुरू हुई "नव भारत टाइम्स" के "प्रतिदिन" कॉलम में, उस दिन तक जारी रही, जिस दिन उनका देहावसान हुआ। इसी तरह शरदजी का आत्मविश्वास, स्वाभिमान और लिखने की चाह मरते दम तक टिकी रही।[61]

शरदजी सुबह से लेकर शाम तक लिखा करते थे। लोग जीने के लिखते हैं वो लिखने के लिए जीते थे। और मरते दम तक शरदजी ने लिखना नहीं छोडा।[62]

शरदजी लेखन–कर्म में असामान्य श्रम करते हुए भी वे चेहरे पर परिश्रम की रेखाएँ नहीं आने देते थे, लेखन के प्रति वे एकनिष्ठ भाव से समर्पित थे, पर उनके सामाजिक आवरण और व्यवहार से यही लागता था कि मित्रों के लिए वे चौबीसों घंटे खाली हैं।[63] शरद जोशी ने अपने प्रहार से ब्रह्माण्ड को नहीं छोड़ा है। शरद जी ने जहाँ भी विसंगति देखी वहाँ उस विसंगति को व्यंग्य के माध्यम से अभिव्यक्त किया है।

साहित्यसंपदा

शरद जोशी ने अपने जीवनकाल में काफी लिखा है। उनका लेखनकार्य बहुविध है। उनकी साहित्य संपदा एक दृष्टिपथ में इस प्रकार है –

लेखन

• 1) बाल्यकाल से ही लेखन आरंभ। दोस्तों के साथ हस्तलिखित पत्रिका निकाली। 2) "नई दुनिया" इन्दौर "परेक्रमा" नामक स्तंभ लेखन 1953 । 3) ज्ञानोदय, रानी, माधुरी आदि विभिन्न पत्रिकाओं में व्यंग्य और कहानियाँ लिखी । 4) "धर्मयुग" में "बैठे ठाले" स्तंभ लेखन । 5) "रविवार" में "नाक के तीर" नामक कॉलम लेखन । 6) नवभारत टाइम्स में प्रतिदिन स्तंभलेखन । 7) सारिका, धर्मयुग, साप्ताहिक – हिंदुस्तान , "रविवार" आदि में व्यंग्य लेख।

संपादन

1) दैनिक मध्य देश, भोपाल, 2) नवलेखन मासिक, भोपाल। 3) हिंदी एक्सप्रेस, बम्बई ।

<u>फिल्मलेखन</u>

1) क्षितिज, 2) छोटी सी बात, 3) साँच को आँच नहीं, 4) गोधूली, 5) दिल है कि मानता नहीं ।

<u>दूरदर्शन धारावाहिक</u>

1) "ये जो है जिन्दगी", 2) "विक्रम और बेताल", 3) "सिंहासान बत्तीसी", 4) "वाह जनाब", 5) "देवीजी", 6) "प्याले में तूफान", 7) "दाने अनार के", 8) "ये दुनिया गजब की"।

<u>कुछ महत्त्वपूर्ण ग्रंथ</u>

शरद जोशी के कुछ महत्त्वपूर्ण ग्रंथ हैं – 1) तिलस्म, 2) जीप पर सवार इल्लियाँ, 3) रहा किनारे बैठ, 4) मुद्रिका रहस्य ।

1) <u>तिलस्म</u>

शरद जोशी का "तिलस्म" एक महत्त्वपूर्ण व्यंग्यप्रधान निबंध संग्रह है। संग्रह में सामाजिक और राजनीतिक दोनों प्रकार के व्यंग्य निबंध संकलित हैं। शरद जोशी ने "तिलस्म" में संकलित अपने निबन्ध "सारी बहसे गुजर कर" में रिश्वतखोरी के रूप का यथार्थ चित्रण किया है। जब तक रिश्वत नहीं मिल जाती तब तक सरकारी कर्मचारी काम पूरा होने में अडचनें डाले जाता है और टस से मस नहीं होता :

"देखिये साहब, इस कुर्सी पर बैठने के बाद हम अपने बाप को भी नहीं पहचानते। हम सिध्दान्त के पक्के हैं ।"

"मैं जानता हूँ", मैंने पराजित होकर कहा । मैं समझ गया था कि यह बहस अन्तकाल तक चल सकती है। इसका समापन कठिन था। पहले भी ऐसे बहसें मैंने की हैं और मैं पराजित हुआ हूँ..

"अब मैं आपसे पूछना चाहता हूँ कि मुझे पहचानने का या स्वीकार करने का कि "मैं मैं हूँ" आप क्या लेंगे ?" मैंने करूण स्वर में कहा ।

"पाँच रूपये । हमारा यही रेट है ।"[64]

उन्होंने "तिलस्म" नामक निबंध में आज के मानव जीवन का एक ऐसा चित्र खिंचा हैं जिसमें आर्थिक अभाव, मानसिक तनाव एवं घुटन को यथार्थ रूप देकर गहरा व्यंग्य अभिव्यक्त किया है ।

2) "जीप पर सवार इल्लियाँ"

इस निबंध संग्रह में लेखक ने धर्म, राजनीति, सामाजिक जीवन, व्यक्तिगत आचरण, भ्रष्टाचार, अंध:विश्वास आदि व्यंग्यपूर्ण निबंध लिखे हैं । इस निबंध संग्रह में कुल 21 निबंध हैं – "सरकार का जादू", "जीप पर सवार इल्लियाँ"', "एक मिनी भ्रष्टाचार", "राजनीतिक हलचल : नगर संस्करण", "ख्याली रामजी का दलबदल", "जीप और जीपवाले", "बजट की रात एक शहर में", "चुनाव : एक मुर्गावीती", आदि अनेक प्रसिध्द निबंध हैं। "एक मिनी भ्रष्टाचार" में गांधी के नाम पर ताने जिन्दगी ठरहने की नहीं खाने तक का बन्दोबस्त कर लेनेवालों का हवाला देते हुए, सच की अपेक्षा झूठ किया गया है।

3) "रहा किनारे बैठ"

"रहा किनारे बैठ" निबंध संग्रह में संकलित "घास छीलने का पाठयक्रम" निबन्ध में पाठयक्रम पर करारा व्यंग्य किया है।

लेखक ने बडे कौशल से वक्रोक्ति द्वारा घास छीलने के पाठयक्रम की उपमा द्वारा शिक्षा के थोथेपन पर, दूषित शोध प्रणाली पर तथा अनेकानेक विषयों को पाठयक्रम में हूँस जाने की प्रवृत्ति पर अपकर्षात्मक व्यंग किया है :

"घास छीलने की कला में निपुण होकर विद्यार्थी के स्वंय का और देश का भविष्य बहुत उज्ज्वल रहेगा ।"[65]

व्यंगकार वाकृदल द्वारा सूक्ष्म व्यंग्य करता है अर्थात व्यर्थ के विषय दिन–प्रतिदिन पाठयक्रम में बढ़ाये जा रहे हैं जिनकी कोई उपयोगिता नहीं है।

4) <u>मुद्रिका रहस्य</u>

"मुद्रिका रहस्य" शरद जोशी का मरणोत्तर 1992 में प्रकाशित व्यंग्य संग्रह है। इस निबंध संग्रह में कुल 29 व्यंग्य निबंध हैं। "दूध पीने की कला", "शाम, खादी और टैक्सियाँ", "यमदूत और नर्स", "मुद्रिका रहस्य", "अतृप्त आत्माओं की रेलयात्रा", "कथा प्रपत्र शैली", "बिना शीर्षक" आदि उनके मौलिक व्यंग्य निबंध हैं।

प्रस्तुत ग्रंथ के प्रस्तावना में श्री लाल शुक्ल ने लिखा है – "शरद जोशी ने एक ओर हास्य और व्यंग्य की रूढ़ सीमाओं को तोड़कर उन्हें नजदीक लाने का असम्भव कार्य किया, वहीं उन्होंने साहित्य की लिखित और वाचित परम्परा को उसी तरह एकात्म बनाने की उपलब्धि अर्जित की जो – शताब्दियों में – कबीर, तुलसी, सूर आदि के साथ जुड़ी है।"[66]

<u>व्यंग्य नाटक</u>

शरद जोशी के साहित्य का अंतिम पडाव "दो व्यंग्य नाटक" हैं । ये दो नाटक एक ही पुस्तकाकार में संगृहीत हैं। वे पुस्तकालय संस्करण में 1979 में प्रकाशित हुए और तत्पश्चात् राजकमल पेपर बैक्स में 1994 में प्रकाशित हूए। इन दो नाटकों के शीर्षक इस प्रकार हैं – 1) " एक था गधा उर्फ अलादाद खाँ," 2) "अन्धों का हाथी"। शरद जोशी ने अपने "दो व्यंग्य नाटकों" के बारे में स्वयं ही यह स्वीकार किया है कि कलकत्ता में आयोजित एक कथाकार सम्मेलन में "अनामिका" के श्री विमल लाठ ने उन्हें पहली बार नाटक लिखने के लिए कहा । लेकिन उस समय लेखक ने लाठ की बात पर अधिक ध्यान नहीं दिया । लेकिन बाद में नाटक लिखने के उपरान्त उनकी प्रेरणा को मुक्त कंठ से स्वीकारा है । शरद जोशी ने यह भी स्वीकार किया है कि उन्हें नाटक पढ़ने और देखने का पर्याप्त शौक था। सर्व प्रथम उन्होंने इंदौर और भोपाल में मंचित लंबे नाटक देखें और बाद में नाटक देखने के लिए दिल्ली और बम्बई गए जहाँ उन्होंने हिंदी, पारसी, मराठी, गुजराती नाटक भी देखें । इतना ही नहीं इसी दौर में उनका परिचय ओम शिवपुरी, सुधा शिवपुरी, कारन्त, सत्यदेव दुबे, बजाज, रैना, शाह, प्रतिभा अग्रवाल आदि श्रेष्ठ रंगकर्मी और निर्देशकों के साथ हुआ और तत्पश्चात उन्होंने अपने दो व्यंग्य नाटक लिखे । ये दोनों व्यंग्यनाटक रंगमंच पर सफलता के साथ खेले गये हैं

और दर्शको द्‌वारा सराहे गये हैं।[67]

1) <u>एक था गधा उर्फ अलादाद खाँ</u>

शरद जोशी का लोकनाट्य शैली में लिखा हुआ "एक था गधा उर्फ अलादाद खाँ" बहुमंचित, बहुचर्चित और बहुलोकप्रिय व्यंग्य नाटक है। इस नाटक में नाटककार ने "अलादाद खाँ" नाम पर तथा उससे संबंधित राजनीतिक और सामाजिक समस्याओं पर करारा व्यंग्य किया है। अलादाद खाँ नाम जुग्गन धोबी के मरे हुए गधे का नाम है और एक शरीफ आदमी का भी नाम है। इस नाम को लेकर नाटक की कथा का जाल बुना गया है। नाटककार ने लोककथा का उपयोग आधुनिक राजनीतिक और सामाजिक संदर्भ में किया है। जुग्गन धोबी अपने "अलादाद खाँ" नामक गधे की अचानक मृत्यु से रोने धोने लगता है जिसको सुनकर लोगों को ऐसा लगता है कि "अलादाद खाँ" नामक कोई रिश्तेदार मरा होगा । जुग्गन धोबी को लोग समझाने का प्रयास करते है। मृत्यु की अटलता पर विचार व्यक्त करते हैं और उसे दु:ख दूर करने के लिए बताते हैं फिर भी वह दुख का रोना गाता ही रहता है। इसके विपरीत "अलादाद खाँ" आदमी को राजनीतिक षड्यंत्र से मारा डाला जाता है। इस षड्यंत्र के सर्वप्रमुख नवाब साहब है। नाटककार ने "एक था गधा उर्फ अलादाद खाँ" में मुख्यतया स्वातंत्र्योत्तर भारत की राजनीति की ही पोल खोल दी है। इसलिए अपनी मशहुरी दिखाने के लिए कभी नवाब कोतवाल का इस्तेमाल करते हें तो कभी चिन्तकों का । नवाब केवल आत्मप्रशंसा – लोलुप व्यक्ति नहीं हैं किंतु धूर्त व्यक्ति हैं । उन्हें राजनीति के बारें में विशेष जानकारी नहीं है लेकिन सामान्य जनता के सामने वे ऐसा आभास निर्माण करते हैं कि वे बड़े राजनीतिज्ञ हैं कलामर्मज्ञ हैं। वे अपने कोतवाल को जनता के सामने राजा की प्रशंसा हो इसलिए कुछ नागरिकों द्‌वारा अपना स्तुतिगान करवाते हैं। उस स्तुतिगान में नवाब के राज्य की प्रजा सुखी है, समृध्द है, शांतिप्रिय है – इसका अहसास करवाते हैं। नाटक के प्रारंभ में कोरस गीत के माध्यम से और नागरिकों के वार्तालाप से इस बात का पता चलता हैं। निम्नलिखित वार्तालाप देखा जा सकता है –

दरबारी – 1 : नवाब की सल्तनत में चारों तरफ अमन है।

शेष दरबारी : नवाब को सल्तनत में चारों तरफ अमन है।

दरबारी – 2 : नवाब के राज में सब सुखी हैं ।

शेष दरबारी : नवाब के राज में सब सुखी हैं ।[68]

कला के बारे में नवाब पूरी तरह से कोरा कागज जैसे है। नवाब को "आज के नाटकों के नाम का भी पता नहीं है। उन्हें ऐसा लगता है कि "आधे–अधूरे", "तुगलक" और "इन्द्रजीत" ये सारे शब्द एक ही नाटक का लम्बा नाम हैं।[69] नाटककार ने कोतवाल को नवाब के एजंट के रूप में प्रस्तुत किया है। वह अपना अधिकतम समय नाचनेवाली रामकली के साथ ही बिताता है और जरूरतमंद लोगों के साथ संपर्क स्थापित कर अपना उल्लू सीधा करता है। यही बात चिन्तकों की भी है। नाटक में जिन तीन चिन्तकों का चित्रण किया गया है वे भी नवाब को अन्नदाता मानकर उसकी खुशामद करने में मशगूल रहते हैं और अपना फायदा कैसे हो इस दृष्टिसे सोचते रहते हैं। नवाब की सांस्कृतिक केंद्र खोलने की और थियेटर कंपनी को मंजूरी देने की बात आज के मंत्रियों तथा नेता लोगों के आश्वासन देने की पध्दति का दूसरा नाम है। अलादाद खाँ नामक व्यक्ति की मृत्यु का सही जिम्मेदार नवाब है। अर्थी को कंधा देने की झूठी प्रशस्ति प्राप्ति के लिए नवाब का यह षड्यंत्र अमानवीय है। नाटक में प्रयुक्त चार दरबारी, तीन चिन्तक और चार नागरिक नवाब के प्रशंसक ज्यादा हैं और अपने कर्तव्य से पूरी तरह से विमुख हैं। नाटक में राजनीति के साथ ही साथ सामाजिकनीति पर भी प्रकाश डाला गया है। नाटक एक साथ राजनीतिक और सामाजिक व्यंग्य से परिपूर्ण है।

नाटक में संवाद तत्व का उपयोग बड़ी मार्मिकता से किया गया है। संवाद एक साथ, चुस्त, मस्त और व्यंग्य को चित्रित करने नें सहायक हुए हैं । नाटक की भाषा चुस्त है, चुटकीली है, अरबी, फारसी, अंग्रेजी शब्दावली से युक्त है। सूर्यभानु गुप्त के गीत विशेषतः कोरस गीत जितने प्रासंगिक हैं उतने ही आकर्षक और व्यंग्यधर्मिता के अनुकूल हैं। नाटक की मंचसज्जा में मुख्यतया बाजार, कोतवाल हा घर , आदि दृश्य उल्लेखनीय हैं। नाटक के छोटे–छोटे दृश्यों में गतिशीलता है इसलिए नाटक प्रारंभ से अंत तक रोचक बन गया है। नवाब के कुछ संवाद भले ही लंबे हैं लेकिन उनमें नाट्य भी ज्यादा है। नाटक का अंत नवाब के द्वारा जुग्गन को पाच हजार रूपये मुआवजे के रूप में दिए जाने से हो जाता है। जिस प्रकार नाटक का प्रारंभ बाजार के दृश्य और कोरस के गीत से होता है, अंत भी उसी तरह

होता है। रामकली का नृत्य और चारों ओर कानून का पहारा है कोरस गीत में आज की राजनीति का पर्दाफाश हुआ है। प्रस्तुत नाटक में आपातकालीन भारतीय राजीनति की ओर संकेत है।

2) <u>अन्धों का हाथी</u>

शरद जोशी का "अन्धों का हाथी" एक लोकप्रिय लघु व्यंग्य नाटक है। प्रस्तुत नाटक भी मुख्यतया राजनीति का पर्दाफाश करनेवाला व्यंग्य नाटक है। यह नाटक भी लोकनाट्य शैली का अनुसरण करनेवाला उत्कृष्ट व्यंग्य नाटक है। इस नाटक का शीर्षक पशु प्रतीक है। मानव मानव है लेकिन कभी कभी वह पशु का इस्तेमाल अपने कार्य सम्पूर्ति के लिए करता है। प्रस्तुत नाटक में हाथी को एक राष्ट्रीय समस्या के रूप में उपस्थित किया गया है। वस्तुतः नाटककारने इस हाथी के प्रतीक का खूबी से उपयोग किया गया है। यद्यपि मंच पर हाथी दिखाई नहीं देता है फिर भी उसका आभास निर्माण करने की क्षमता नाटककार की चरित्रसृष्टि, पात्रों के वार्तालाप और उनके अभिनय कौशल में है। प्रस्तुत नाटक में प्रमुख पात्र के रूप में चार अन्धे ओर एक अन्धी को चित्रित किया गया है। ये पांचों पात्र हाथी की कल्पना अपने–अपने दृष्टिकोण से करते हैं। हाथीरूपी राष्ट्रीय समस्याओं को ये पाँच अन्धे अलग–अलग दृष्टि से इसलिए व्यक्त करते हैं कि उनके आँखें न होते हुए भी उनकी दृष्टियाँ अलग–अलग हैं। वास्तव में मंचपर हायी न होते हुए भी हाथी की कल्पना को जाती है और प्रत्येक अंधे को हाथी अलग–अलग प्रतीत होता है। अन्धा – 1 को ऐसा लगता है कि हाथी "दीवार" की तरह है। अन्धा – 2 को ऐसा लगता है कि हाथी "सूप" की तरह है। अन्धा – 3 को हाथी "साप या अजगर" की तरह लगता है। अन्धा – 4 को हाथी "रस्सी" की तरह लगता है ओर अन्धी को ऐसा लगता है कि हाथी "खम्भें" की तरह है। नाटककार ने पाँचो अन्धों के माध्यम से हाथी रूपी राष्ट्रीय समस्या को अलग–अलग दृष्टियों से देखने वाले मन्त्री, सचिव, संचालक, बाबू, या चपरासी अथवा नेता, पुलिस, पत्रकार, प्रोफेसर आदि की विभिन्न दृष्टियों को उजागर किया है। वस्तुतः राष्ट्रीय समस्या एक ऐसी समस्या है जिसे एक दृष्टि से देखना और हल करना मुश्किल है। नाटककार ने यह भी दर्शाया है कि राष्ट्रीय समस्या को पहचानने के लिए और हल करने के लिए जिस बात की और कार्य की आवश्यकता होती है उसको नजर अंदाज कर यह दिखाया है

कि राष्ट्रीय समस्या की ओर इशारा करनेवाले सूत्रधार को मार डाला है। लेकिन नाटककार ने यह भी दर्शाया है कि राष्ट्रीय समस्यायें समय–समय पर उभर ही आएंगी और समय–समय पर प्रश्नकर्ता सूत्रधार भी जन्म लेते रहेंगे। सूत्रधार का बारबार जन्म लेना राष्ट्रीय समस्याओं का बार–बार जन्म लेना है। राष्ट्रीय समस्या किसी एक काल में खत्म होने वाली समस्या नहीं है। राष्ट्रीय समस्या बार–बार उद्‌भूत होनेवाली समस्या है। जिस प्रकार किसी समस्या को उद्‌घाटित करने वाले सूत्रधार का अंत नहीं होगा उसी प्रकार हर समय उद्‌भूत राष्ट्रीय समस्या का अंत भी नहीं होगा, यही शाश्वत सत्य है। यहाँ नाटककार की यह भी दृष्टि रही है कि राष्ट्रीय समस्याएँ कितनी भी मुश्किल और खतरनाक क्यों न हो हमें अपने प्रश्न पूछने हैं और समस्याओं की ओर इशारा करने के अधिकार को कभी नहीं छोडना हैं।[70] प्रस्तुत नाटक में पात्र अन्धी के माध्यम से नाटक के जिन तीन नियमों का उल्लेख किया गया हैं वह इस नाटक में व्यंग्य निर्मिति में सहायक ही हैं। जिस प्रकार "एक था गधा उर्फ अलादाद खाँ" में नवाब के संवाद लंबे किन्तु नाट्यपूर्ण हैं उसी प्रकार "अन्धों का हाथी" नाटक में सूत्रधार के संवाद लंबे होकर भी नाट्यपूर्ण हैं। इस नाटक की भाषा जितनो रोचक है उतनी ही सटीक हे, व्यंग्यपूर्ण है। लोकनाट्य शैली की दृष्टि से यंह नाटक भी एक सफल लघु नाटक है। पशु–प्रतीक का प्रयोग नाटककार की पैनी दृष्टि का परिचायक है। रंगमंच की दृष्टि से यह भी एक सफल व्यंग्य नाटक है।

<u>आलोचकों की निगाहों में – शरद जी</u>

नरेन्द्र कोहली के शरद जोशी के बारे में विचार – "वह जानता है कि कहाँ अनुचित है। वह जानता है, उसे किसका विरोध करना है। वह जानता है कि किन शब्दों में यह विरोध होना चाहिए। ... और शब्दों का जादू तो जैसे पाठक को बाँध ही लेता है .... इच्छा होती थी कि मैं भी इतना ही अच्छा लिख सकूँ।"[71]

विश्वनाथ सचदेव ने कहा है – "शरद जी ऐसे व्यंग्यकार थे, जिन्होंने चार दशकों के अपने लेखन में लगातार यह कोशिश की कि साहित्य शब्दों का खेल या कोरी किस्सागोई मात्र न बना। सामाजिक सरोकारों से जुडना वे अच्छे साहित्य की शर्त भी मानते थे और कसौटी भी। भारी–भरकम शब्दोंवाली धीर गम्भीर भाषा के प्रति उन्हें कभी मोह नहीं रहा।

वे तो "व्यंग्य" को भी व्यंग्य कहा रहते थे, क्योंकि "व्यंग्य" उन्हें बोलने में कठिन लगता था। सहजता के प्रति उनका यह आग्रह ओर मोह उनकी रचनाओं की एक ताक़त थी।"[72]

पुरस्कार – सम्मान

शरद जी को 1983 में चकल्लस पुरस्कार मिला था ।

1990 में राष्ट्रपति द्वारा "पद्मश्री" की उपाधि से शरद जी सम्मानित हुए थे।[73]

शरद जी को काका हाथरसी पुरस्कार, श्री.मध्यभारत हिन्दी साहित्य समिति, इन्दौर द्वारा उन्हें "सारस्वत मार्तण्ड" की उपाधि, अट्टहास 91 व "परिवार" पुरस्कार मरणोपरान्त प्राप्त हुए थे। समय-समय पर वे अन्य पुरस्कारों से सम्मानित हुए थे।[74]

25 वर्षों तक कवि–सम्मेलन के मंच से गद्यपाठ किया था।

निधन

शरद जी को डाइबिटीज था । बाद में उनका स्वास्थ्य कुछ ज्यादा बिगड़ा । अस्पताल गए, पर फिर ठीक होकर आ गए। लेकिन बाद में अकस्मात ही उनका निधन 5 सितम्बर 1991 में मुंबई में ही हुआ।[75] वे अपने खरीदे हुए फ्लैट में अधिक वर्षो तक नहीं रहे। उनकी खुद की इच्छा थी कि उनका एक फ्लैट हो। बस, उनका वही सपना पूरा हो गया। उनका पार्थिव शरीर न सही, अपनी रचनाओं में अपने अक्षर शरीर में वे हैं और सदा–सदा रहेंगे ।[76]

निष्कर्ष

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर निष्कर्षतः कहा जा सकता है कि –

1. यद्यपि शरद जोशी बहुमुखी व्यंग्यकार हैं फिर भी उनके दो व्यंग्य नाटक "एक था गधा उर्फ अलादाद खाँ", "अन्धों का हाथी" साठोत्तर हिंदी रंगमंच की विशिष्ट उपलब्धि हैं।
2. शरद जोशी का जीवनवृत्त इसलिए महत्त्वपूर्ण है कि उन्होंने अपने संघर्षपूर्ण जीवन में ही साहित्य साधना की है और उसमें वे पूरी तरह से कामयाब हुए हैं। उनकी कामयाबी में उनकी पत्नी का सर्वोपरि योगदान रहा है।

3. उन्होंने अपनी साहित्य साधना में दृढ निश्चय को अधिक महत्त्व दिया है और लेखन ही उनका छंद रहा है। उनका लेखन कार्य उनका भोगा हुआ यथार्थ ही है।

4. उनके समूचे साहित्य में व्यंग्य का ही विस्तार है। यह व्यंग्य केवल मनोरंजन के साधन के रूप में नहीं, बल्कि समाज सुधार के रूप में भी अपना महत्त्व रखता है।

5. शरद जोशी के दो व्यंग्य नाटक पूरी तरह से राजनीतिक और सामाजिक व्यंग्य के विविध क्षेत्रों को सहज ही संस्पर्श करते हैं और मंचीय उपलब्धियों को भी प्रमाणित करते हैं। दोनों नाटक लोकनाट्य शैली के अनूठे उदाहरण हैं।

6. शरद जोशी को प्राप्त पुरस्कार, सम्मान उनके साहित्य की गरिमा को ही उजागर करते हैं और सठोत्तर व्यंग्यकारों में उनका श्रेष्ठ स्थान निर्धारित करते है।

संदर्भ :-

1. शरद जोशी : एक यात्रा – संपा.डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क.1993, पृ.121
(शरद जोशी : व्यक्तित्व का विकास और संस्मरण – राजेंद्र सिन्हा का लेख)
2. वही, पृ.68 (वह बहुरि अकेला आदमी – प्रभाष जोशी का लेख)
3. मुद्रिका रहस्य : व्यंग्य रचनाएँ,-शरद जोशी, प्र.संस्क.1992, पृ.155
4. शरद जोशी : एक यात्रा – संपा.डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क. 1993, पृ.127
(शरद जोशी : व्यक्तित्व का विकास और संस्मरण – राजेंद्र सिन्हा का लेख)
5. मुद्रिका रहस्य : व्यंग्य रचनाएँ, शरद जोशी, प्र.संस्क.1992, पृ.155
6. शरद जोशी : एक यात्रा – संपा.डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क.1993, पृ.121
7. वही, पृ.127
8. वही, पृ.17
(काहे की आत्मा और कैसा कथ्य ? – शरद जोशी का लेख)
9. वही, पृ.121 (शरद जोशी : व्यक्तित्व का विकास और संस्मरण – राजेंन्द्र सिन्हा का लेख)
10. मुद्रिका रहस्य – व्यंग्य रचनाएँ, शरद जोशी, प्र.संस्क.1992, पृ.155
11. शरद जोशी : एक यात्रा, संपा.डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क.1993, पृ.67 (वह बहुरि अकेला आदमी – प्रभाष जोशी का लेख)
12. वही, पृ.68 (वह बहुरि अकेला आदमी – प्रभाष जोशी का लेख)
13. मुद्रिका रहस्य : व्यंग्य रचनाएँ – शरद जोशी ,प्र.संस्क.1992, पृ.155
14. शरद जोशी : एक यात्रा – संपा.डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क.1993, पृ.47, 48
15. वही, पृ.195 (एक शरद यात्रा – डॉ.सूर्यबाला का लेख)
16. वही, पृ.48 (उनको लिखने का शौक जुनून की हद तक था – इरफाना शरदजी का लेख)
17. वही, पृ.178 (असहमति की ग्राफलाइन – सरोजकुमार का लेख)

18. वही, पृ.178 (असहमति की ग्राफलाइन – सरोजकुमार का लेख)

19. वही, पृ.178

20. वही, पृ.178

21. शरद जोशी : एक यात्रा – संपा.डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क.1993, पृ.197 (एक शरद यात्रा – डॉ.सूर्यबाला का लेख)

22. वही, पृ.66 (बहुत बहुत प्यार – शरद जोशी – नरेन्द्र कोहली का लेख)

23. वही, पृ.58 (नई दुनिया का वह नया व्यंग्यकार – धर्मवीर भारती का लेख)

24. वही, पृ.58

25. वही, पृ.59

26. वही, पृ.9 (अपनी बात : डॉ.शशि मिश्र का लेख)

27. वही, पृ.194 (एक शरद यात्रा – डॉ.सूर्यबाला का लेख)

28. शरद जोशी : एक यात्रा, संपा.डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क.1993, पृ.59 (नई दुनिया का वह नया व्यंग्यकार – धर्मवीर भारती का लेख)

29. वही, पृ.56

30. वही, पृ.49 (उनको लिखने का शौक जुनून की हद तक था – इरफाना शरद का लेख

31. वही, पृ. 50

32. वही, पृ.186 (बहुआयामी लेखक के धनी – शरद जोशी – सुरेंद्र शर्मा का लेख)

33. वही, पृ.188

34. वही, पृ.177 (असहमति की ग्राफलाइन – सरोजकुमार का लेख)

35. वही, पृ.178, 179

36. वही, पृ.180

37. वही, पृ.191 (एक शरद यात्रा – डॉ.सूर्यबाला का लेख)

38. वही, पृ.191

39. वही, पृ.192

40. वही, पृ.178 (असहमति की ग्राफलाइन – सरोजकुमार का लेख)

41. वही, पृ.186 (बहुआयामी लेखक के धनी शरद जोशी – सुरेंद्र शर्मा का लेख)

42. वही, पृ.112 (शरद जोशी : व्यक्तित्व और कृतित्व – रवींद्रनाथ त्यागी का लेख)

43. वही, पृ.49,50 (उनको लिखने का शौक जुनून की हद तक था – इरफाना शरद का लेख)

44. वही, पृ.124 (शरद जोशी : व्यक्तित्व का विकास और संस्मरण – राजेंद्र सिन्हा का लेख)

45. वही, पृ.50 (उनको लिखने का शौक जुनून की हद तक था – इरफाना शरद का लेख)

46. वही, पृ.176, 177 (असहमति की ग्राफलाइन – सरोजकुमार का लेख)

47. वही, पृ.177

48. मुद्रिका रहस्य, व्यंग्य रचनाएँ – प्र.संस्क.1992, पृ.156

49. वही, पृ.156

50. शरद जोशी : एक यात्रा, संपा.डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क.1993, पृ.67 (वह बहुरि अकेला आदमी – प्रभाष जोशी का लेख)

51. वही, पृ.67

52. वही, पृ.173 (सम्मेलन कवियों का बाजी गद्यकार की – सरोज कुमार का लेख)

53. वही, पृ.186, 137 (बहुआयामी लेखक के धनी – शरद जोशी – सुरेंद्र शर्मा का लेख)

54. वही, पृ.164 (सामान्य की असामान्यता – श्रीलाल शुक्ल का लेख)

55. वही, पृ.67 (वह बहुरि अकेला आदमी – प्रभाष जोशी का लेख)

56. वही, पृ.75 (शरद जोशी का व्यंग्य – साहित्य – प्रेम जनमेजय का लेख)

57. वही, पृ.75

58. वही, पृ.177 (असहमति की ग्राफलाइन – सरोजकुमार का लेख)

59. वही, पृ.172 (सम्मेलन कवियों का बाजी गद्यकार की – सरोजकुमार का लेख)

60. वही, पृ.176 (असहमति की ग्राफलाइन – सरोजकुमार का लेख)

61. वही, पृ.176

62. वही, पृ.186 (बहुआयामी लेखक के धनी – शरद जोशी – सुरेंद्र शर्मा का लेख)

63. वही, पृ.163 (सामान्य की असामान्यता – श्रीलाल शुक्ल का लेख)

64. स्वातंत्र्योत्तर हिंदी निबंध साहित्य में व्यंग्य – उषा शर्मा, प्र.संस्क.1985, पृ.216 (शरद जोशी :'तिलस्म,' पृ.3, पृ.121)

65. वही, पृ.229 (शरद जोशी –'रहा किनारे बैठ,' नेशनल पब्लिशिंग हाऊस, दिल्ली, 1972, पृ.90)

66. मुद्रिका रहस्य : व्यंग्य रचनाएँ – शरद जोशी, प्र.संस्क.1992, पृ.5

67. दो व्यंग्य नाटक – शरद जोशी, प्र.संस्क.1994 (पेपरबैक्स) अपनी बात, पृ.5–7

68. वही, पृ.12

69. वही, पृ.17

70. नयी रंग चेतना और हिंदी नाटककार – डॉ.जयदेव तनेजा, प्र.संस्क.1994, पृ.165

71. शरद जोशी : एक यात्रा, संपा. डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क.1993, पृ.60 (बहुत–बहुत प्यार शरद जोशी – नरेंद्र कोहली का लेख)

72. वही, पृ.136 (विसंगत यथार्थ का वह निस्संग चितेरा – विश्वनाथ सचदेव का लेख)

73. मुद्रिका रहस्य : व्यंग्य रचनाएँ – शरद जोशी, प्र.संस्क.1992, पृ.156

74. वही, पृ.156

75. शरद जोशी : एक यात्रा – संपा.डॉ.शशि मिश्र, प्र.संस्क.1993, पृ.77 (शारदा के व्यंग्यपुत्र : शरद जोशी – डॉ.बालेन्दु शेखर तिवारी का लेख)

76. वही, पृ.59 (नई दुनिया का वह नया व्यंग्यकर – धर्मवीर भारती का लेख)